# सभी के लिए अंग्रेजी

## क्या यह वांछनीय और संभव है?

**मैक्सिन बर्न्टसेन**

**अनुवादः मनोज कुमार झा**

*हो सकता है, किसी दिन एक ऐसा जनविश्वास अस्तित्व में आए जो सुविचारित हो और इस बात से अच्छी तरह से वाकिफ हो कि सभी संभव गुनाहों में सर्वाधिक घातक गुनाह किसी बच्चे के जीवट को कुचल देना है...*

**एरिक इरिक्सन, यंग मैन लूथर**

यदि मैं थोड़ा-सा व्यक्तिगत इतिहास पेश करते हुए शुरुआत करूं तो कृपया मुझे सहन करने का कष्ट करें। मैं जन्म से अमेरिकी हूं। पहली बार 1961 में भारत आई थी। विवेक वर्द्धिनी कालेज में बतौर व्याख्याता अंग्रेजी पढ़ाते हुए दो साल तक मैं हैदराबाद में रही और प्रिंसिपल डॉ. एस. डी. सतवालेकर के घर में ठहरी। यह परिवार मराठी था इसलिए मराठी के प्रति मेरी रुचि जागी। 1963-1966 में भाषा विज्ञान में कोर्स वर्क करने मैं यूनिवर्सिटी ऑफ पेनसिलवानिया चली गई तथा मराठी और थोड़ा तेलुगु का भी अध्ययन किया। 1966 में मराठी बोली में सामाजिक विभिन्नता पर अपने पीएचडी शोधपत्र के लिए व्यावहारिक अध्ययन हेतु पश्चिमी महाराष्ट्र के तालुका कस्बा फाल्टन चली गई। 1972 में मैंने पाया कि मैं फाल्टन में बसना और शिक्षा के क्षेत्र में कुछ रचनात्मक करना चाहती हूं। मैंने भारतीय नागरिकता के लिए आवेदन किया लेकिन कोई जवाब नहीं आया। इस दौरान अपना शोध पूरा करने के साथ-साथ मैं जय निम्बकर के साथ गैर मराठी वयस्क शिक्षार्थियों के लिए मराठी शिक्षण-सामग्री तैयार करने का कार्य कर रही थी। हर दूसरे साल मुझे, असोसिएटेड कॉलेज ऑफ मिडवेस्ट इंडिया स्टडीज़ प्रोग्राम के तहत पुणे में दो सत्र बिताने की तैयारी करने वाले अमेरिकी स्नातकों को मराठी का एक लघु अवधि का पाठ्यक्रम पढ़ाने, अमेरिका जाना होता था।

1978 एक अहम बदलाव का वर्ष था। उस वर्ष अप्रैल में मैंने स्कूल न जाने वाले कई दलित बच्चों को एकत्र किया और उन्हें पढ़ना-लिखना सिखाने का प्रयत्न शुरू किया। दिसम्बर में मुझे आखिरकार भारतीय नागरिकता मिल गई। लगभग उसी समय फाल्टन नगर पालिका ने एक पुरानी धर्मशाला हमारे लिए साक्षरता कक्षाएं चलाने के लिए तय कर दी। मेरा बुनियादी खयाल इस काम को अनौपचारिक और अस्थायी काम के तौर पर चलाने का था फिर भी, इसने नगरपालिका के स्कूलों में बच्चों को भरती करने तथा पढ़ने-लिखने और गणित का अतिरिक्त शिक्षण प्रदान करने के एक कार्यक्रम- आपली शाला (हमारा स्कूल) के तौर पर आकार ले लिया। हम स्कूल की ओर से पुस्तकें और जरूरत पड़ने पर बच्चों और उनके अभिभावकों को स्वास्थ्य सेवाएं भी मुहैया कराते थे। 1984 में हमने औपचारिक तौर पर प्रगत शिक्षा संस्थान (पीएसएस) की शुरुआत की। प्रोग्रेसिव एजुकेशन सोसाइटी और आपली शाला इसकी एक इकाई बन गईं।

इस समय तक अनेक लोग मुझसे एक पूर्णकालिक अंग्रेजी माध्यम स्कूल शुरू करने की अपील करने लगे थे। लम्बे समय तक मैं यह कह कर मना करती रही कि पहले से ही हमारे हाथ फंसे हुए हैं। फिर भी, अंततः मैंने महसूस किया कि अच्छी शिक्षा की जरूरत न सिर्फ दलित समुदाय के बच्चों बल्कि दलित से लेकर आभिजात्य वर्ग तक के सभी बच्चों को है। परिणामस्वरूप, मैंने समुदाय के सभी वर्गों के छात्रों के साथ एक पूर्णकालिक मराठी माध्यम स्कूल-कमला निम्बकर बालभवन (केएनबी) शुरू करने का निश्चय किया। यद्यपि, शिक्षण का माध्यम मराठी था किन्तु हम हिन्दी तथा अंग्रेजी भी पढ़ाते थे। साक्षरता के प्रति विशेष रुचि के साथ-साथ एक भाषा-विज्ञानी होने के नाते मैंने मराठी में पढ़ने-लिखने के प्रशिक्षण को लेकर एक प्रविधि विकसित की, जिसका सफलतापूर्वक इस्तेमाल हमने न सिर्फ केएनबी में किया बल्कि फाल्टन तालुका के जिला परिषद के स्कूलों में भी किया।

केएनबी में 30 वर्षों तक काम करने के बाद 2012 में, टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज़ (टीआईएसएस) की नई शाखा, जो हैदराबाद में स्थापित हो रही थी, से जुड़ने मैं हैदराबाद आ गई। टीआईएसएस में आने के साथ मेरी एक उम्मीद उसी तरह तेलुगु में पठन-पाठन पद्धति को अपनाने की थी, जो हमने महाराष्ट्र में विकसित की थी। इस वर्ष की जनवरी में, सर रतन टाटा ट्रस्ट (एसआरटीटी) की वित्तीय मदद से हम इस परियोजना को चालू करने में समर्थ हो गए हैं।

कुछ महीने तैयारी करने जैसे- अनुमति प्राप्त करना आदि- के बाद हमने उन सरकारी स्कूलों का सर्वेक्षण शुरू किया, जिनमें जाने के लिए हमें कहा गया था। हमारा लक्ष्य तेलुगु माध्यम स्कूलों में काम करना था लेकिन आश्चर्य कि इनमें से कुछ स्कूलों को पहली कक्षा से ही अंग्रेजी माध्यम कर दिया गया था और बाकी स्कूलों को भी इस साल के जून में पहली कक्षा से अंग्रेजी माध्यम बनाया जाना था। इन सभी स्कूलों के अधिकतर बच्चों का अंग्रेजी से बहुत कम वास्ता पड़ता था तथा ज्यादातर शिक्षक अंग्रेजी बिल्कुल नहीं जानते थे। कुछ होशियारी से काम लेने के बाद हमने पांच स्कूलों का सर्वेक्षण पूरा किया। तीन पहले से तय स्कूलों में से थे ओर दो नए। एक को छोड़कर सभी पहली कक्षा से ही अंग्रेजी माध्यम के थे।

कैसे इस स्थिति की व्याख्या कर सकते हैं और इससे कैसे निपट सकते हैं? एक स्तर पर व्याख्या स्पष्ट हैः न सिर्फ हैदराबाद में बल्कि पूरे भारत के शहरों और कस्बों में गरीब अभिभावकों में अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में भेजने की होड़ है। इस बात से हम इनकार नहीं कर सकते कि अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में अपने बच्चों को भेजने की इन अभिभावकों की इच्छा का एक तार्किक आधार है। अभिभावक इस बात से अच्छी तरह वाकिफ हैं कि हजारों मध्य वर्गीय और उच्च-मध्य वर्गीय भारतीय अपनी उच्च शिक्षा के लिए विदेश- विशेष तौर से अमेरिका, ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया- जा रहे हैं। वंचित जानता है कि पहले से ही सुविधा संम्पन्न लोग अपनी शिक्षा पूरी कर अथवा विदेशों में ऊंचे वेतन वाली नौकरियां हासिल कर या भारत वापस आकर अच्छी कमाई वाले काम हथिया कर अपनी स्थिति और मजबूत कर लेंगे। अगर अभिभावक अपने बच्चों को किसी विश्वविद्यालय में पढ़ने अथवा किसी बहुराष्ट्रीय निगम अथवा किसी बीपीओ, ट्रैवल सेवा, शॉपिंग माल में काम करने अथवा टैक्सी या ऑटो रिक्शा चलाने के लिए विदेश भेजने की अभिलाषा रखते हैं, तो वे जानते हैं कि अंग्रेजी का ज्ञान आवश्यक है। और वे गलत नहीं हैं। पर वे यह भी महसूस करते हैं कि अंग्रेजी माध्यम में पढ़े बिना बच्चा या बच्ची अंग्रेजी नहीं सीख सकती।

निम्न आय वर्ग के परिवार, जहां तक संभव है कम शुल्क वाले अंग्रेजी माध्यम के निजी स्कूलों का विकल्प अपना रहे हैं। यह चलन सरकार द्वारा संचालित स्कूलों के अस्तित्व के लिए ही घातक है। कुछ राज्यों में सरकारें अपने स्कूलों में शिक्षण का माध्यम अंग्रेजी को बना रही हैं। राजनीतिक नज़रिए से यह आवश्यक हो सकता है लेकिन क्या हमारी सरकारों के लिए अपने स्कूलों का संचालन अंग्रेजी माध्यम में करना और ऐसे छात्रों की भीड़ तैयार करना, जिनका भाषा पर अधिकार हो, संभव है? यदि यह संभव भी हो तो क्या यह वांछनीय है?

नए स्कूली वर्ष के पहले दिन किसी सरकारी स्कूल की पहली कक्षा में कदम रखते समय, जब कोई पचास बच्चों को ''ए फॉर एप्पल, बी फॉर बैट'' आदि चिल्लाते हुए सुनता है, तब इस प्रश्न का सामने आना लाजिमी है। अविश्वसनीय बात यह है, जैसाकि मेरी मित्र जेन साही ने लक्ष्य किया कि इस पद्धति से भी कुछ बच्चे थोड़ी अंग्रेजी सीख लेते हैं। इसमें मनुष्य की प्रवृत्ति के लचीलेपन तथा विस्मित कर देने वाली हमारी संज्ञानात्मक निधि का योगदान है। लेकिन ऐसी दृष्यमान प्रारंभिक सफलता अंग्रेजी में शिक्षित होने के लिहाज से बच्चों को बहुत दूर तक नहीं ले जा सकती। अंग्रेजी के बारे में 2016 की 'असर' रिपोर्ट दिखाती है कि कक्षा तीन के परखे गये बच्चों में लगभग एक तिहाई ही सामान्य शब्दों को पढ़ सकते थे यद्यपि वे कक्षा एक से ही इन्हें पढ़ रहे थे। (फिर भी, इसे महत्व दिया जाना चाहिए कि क्षेत्रीय भाषाओं में भी सीखने को लेकर परिणाम बहुत संतोषजनक नहीं रहे हैं। हाल के वर्षों में 'असर' की रिपोर्ट ने लगातार दर्शाया है कि पूरे देश में सरकारी स्कूलों के कक्षा 3 के आधे से अधिक बच्चे क्षेत्रीय भाषाओं के कक्षा एक का पाठ नहीं पढ़ सकते।)

कुल मिलाकर, यह साफ है कि भारत में कहीं के भी अधिकतर सरकारी स्कूल रातोंरात अंग्रेजी माध्यम का स्कूल बनने की स्थिति में नहीं हैं। वास्तविकता को बदले बिना स्कूल का लेबल बदलने की मौजूदा नीति का जारी रहना अंततः छात्रों तथा शिक्षातंत्र- दोनों के लिए अनर्थकारी परिणाम लाएगा। पूरे देश में राज्य सरकारें इस सवाल से जूझ रही हैं कि- ''विशेषज्ञों की राय है कि बच्चों की शिक्षा पहले मातृभाषा में होनी चाहिए लेकिन बेचारे अभिभावक अंग्रेजी माध्यम की मांग कर रहे हैं''- ऐसे में हमें क्या करना चाहिए?

क्या तुरत-फुरत अंग्रेजी माध्यम बना दिए जाने वाले स्कूलों का कोई विकल्प है? क्या आगे कोई रास्ता है? बहुत संकोच के साथ तात्कालिक तौर पर मेरा सुझाव है कि हो सकता है, लेकिन इस तरफ देखने से पहले हमें शिक्षण के माध्यम तथा मातृभाषा अथवा पहली भाषा के अवमूल्यन के सवाल पर गहराई से विचार करना होगा।

## मातृ भाषा का अवमूल्यन

इस चर्चा के शीर्षक में मैंने 'सभी के लिए अंग्रेजी' मुहावरे का प्रयोग किया है। मैं मान लेती हूं कि अधिकतर लोगों के लिए इस मुहावरे में शिक्षण के माध्यम के तौर पर अंग्रेजी अंतर्निहित है। यह विचार अभिभावकों, बच्चों तथा शिक्षकों में एक सम्मोहक उत्तेजना जगाता है। (उनमें भी जो अंग्रेजी नहीं जानते और उन्हें अंग्रेजी के जरिए पढ़ाना है।) अभिभावक तथा शिक्षक अपने बच्चों के अंग्रेजी सीखने और अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में जाने वाले समृद्ध बच्चों से स्पर्धा करने का सपना देखते हैं। हाशिए की पृष्ठभूमि वाले बच्चे को भी, यदि इलु, इलु, इलु ('घर, घर, घर') तथा 'जॉनी, जॉनी, यस पापा? ईटिंग शुगर? नो पापा,' गाने का विकल्प दिया जाए तो बाद वाले को चुनेंगे। क्यों? क्या ऐसा है कि किसी तरह से ये मामूली सा गीत गा लेना भी उन्हें ऐसा महसूस कराता है जैसे वे एक नई और खूबसूरत दुनिया में शामिल हो गये हों? इसी तरह, जब मां और पिता के लिए तेलुगु शब्द पूछा जाता तो प्रायः बच्चों का जवाब ''मम्मी'' और ''डैडी'' होता। (उसके बाद बाकी संबधियों के लिए वे तेलुगु में शब्द चुनते हैं।)

दुखद बात यह है कि, मातृभाषा के जरिए शिक्षा आज अवमूल्यित हो गई है। किसी का यह कहना कि उसने क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से एक सरकारी स्कूल में पढ़ाई की है, लज्जा की बात हो गई है, यह एक तरह से यह स्वीकार करना है कि वह वंचित तबके से आता है। सदा से ऐसा नहीं था और अधिकतर देशों में आज भी ऐसा नहीं है।

मातृभाषा या पहली भाषा के जरिए शिक्षण के पक्ष की दलील क्या है? मातृभाषा या पहली भाषा एक अमूल्य उपहार है, जो यह जीवन हम सभी को देता है। मातृभाषा में उकेरे गए (एनकोडेड) अनुभव के जरिए ही बच्चा या बच्ची दुनिया की एक तसवीर अपने मस्तिष्क में निर्मित करती है। घर और परिवार, ज़मीन और मौसम, भोजन, गीतों, कहानियों, त्यौहारों, रोजमर्रा के अनुष्ठानों- धर्मनिरपेक्ष व धार्मिक दोनों- खेलों, विवाहों, अंत्येष्टियों तथा शुरुआती सामाजिक संबंधों, पेशों, प्रोद्योगिकियों, कलाओं और शिल्पों की स्मृति बच्चे के बोध, उसकी सोच तथा सीखने- सभी को

मातृ-भाषा आधार प्रदान करती है। समझ का ज्ञात से अज्ञात की ओर विस्तार होने से सहज प्रवाह में सीखना संभव हो पाता है। अगर कोई बच्चा 'जॉनी, जॉनी,' से अस्वभाविक तौर पर उत्तेजित होता है तो क्या यह इसलिए कि बच्चे या बच्ची को अपने अनुभवों को मूल्यवान और साझा करने योग्य समझने को कभी प्रोत्साहित नहीं किया गया?

इसे जोर देकर कहा जाए कि : मातृभाषा के माध्यम से सीखना, शिक्षा को आसान और कहीं अधिक पारदर्शी बनाता है। संसार का जो ज्ञान, बच्चा हासिल कर चुका होता है वह बोलने, सुनने, पढ़ने और लिखने के उन्नत स्तर को सुगम बनाने के लिए उसके पास हर क्षण उपलब्ध होता है।

समाज के दृष्टिकोण से, शिक्षा का एक जैसा माध्यम सामाजिक संप्रेषण के लिए एक आधार मुहैया कराता है। हालांकि कोई गारंटी नहीं है कि इससे यह संप्रेषण हो ही जाएगा। इसके अतिरिक्त, किसी साझा आम भाषा का एक मकसद होता है कि वह समाज को उसके सांस्कृतिक इतिहास से संपर्क बनाए रखने में समर्थ बनाती है। मैं सिर्फ साहित्य के बारे में ही नहीं बल्कि पारंपरिक खेती की उन पद्धतियों (मसलन अंतर फसली अनाज और दालों की खेती) की बात कर रही हूं जो मिट्टी को नवीकृत करती हैं अथवा जिनमें बारिश के पानी का संग्रह करने और उसके परिवहन की तकनीकें हैं।

एक साझा आम भाषा समाज को अपने सामाजिक इतिहास को आलोचनात्मक ढंग से देखने का अवसर भी देती है। कुछ दशक पूर्व महाराष्ट्र में दलित साहित्य के प्रसार ने बड़ी संख्या में हिन्दू जाति के लोगों के लिए दलित अनुभवों को समझना मुमकिन बनाया। अभी भी बहुत अस्वीकार है, पीड़ित को लेकर ढ़ेरों दोषारोपण है लेकिन इसे नकारा नहीं जा सकता कि दलित साहित्य का प्रभाव पड़ा है।

## अंग्रेजी की थोड़ी प्रशंसा

चाहे हम मातृभाषा या पहली भाषा का कितना गुणगान कर लें, हम इनकार नहीं कर सकते कि कम से कम मौजूदा समय में, अंग्रेजी वैश्विक तथा स्थानीय -दोनों स्तर पर ताकत की भाषा है। यह ज्ञान सृजन की भी प्रमुख भाषा है। अनगिनत व्यावहारिक फायदे मुहैया कराने के अलावा अंग्रेजी मानव अनुभव को लेकर नया और बहुरंगी नजरिया प्रदान करती है। ऐसा कहा जाता है कि विभिन्न देशों के लोग जब सिर्फ अपनी मातृभाषा में विचार-विमर्श करने तक सीमित हो जाते हैं, तब एक असामान्य भय महसूस करने की बात करते हैं। यद्यपि, यह इतिहास का एक संयोग है कि अंग्रेजी ने इस देश में ऐसी पैठ बना ली है, इसका लाभ न उठाना भूल होगी। समस्या, मातृभाषा के लाभों की बलि चढ़ाए बगैर, अंग्रेजी को सभी के लिए सुलभ बनाना है।

## बीच की स्थिति : कमिन्स का द्विभाषी मॉडल

जो दलील मैं देना चाहूंगी, वह है कि एक बीच की स्थिति है, जो वांछनीय है और संभव भी हो सकती है- हालांकि इसके लिए मजबूत राजनीतिक इच्छा तथा सभी स्तरों पर प्रतिबद्धता की जरूरत पड़ेगी।

जिस स्थिति की मैं चर्चा करूंगी वह शिक्षा का एक द्विभाषी मॉडल है। यह कानाडाई भाषाविज्ञानी जेम्स कमिन्स की सैद्धांतिक अंतर्दृष्टियों पर आधारित है। कमिन्स ने अपना मॉडल कनाडा के संदर्भ में विकसित किया था, जहां भारत की तुलना में भाषाई विधिधता बहुत कम है। इसके अतिरिक्त, जैसा मैंने इसे समझा है, उनका मॉडल विशेष तौर पर ऐसी परिस्थितियों में इस्तेमाल किया गया, जहां गैर अंग्रेजीभाषी व्यक्ति किसी अंग्रेजीभाषी देश में जाकर रहने लगे। अतः उनके लिए अंग्रेजी से संपर्क का अभाव कोई समस्या नहीं थी। भारत के मामले में, दूसरी ओर एक या अधिक भारतीय भाषाएं बोलने वाली एक बड़ी आबादी अंग्रेजी में उच्चस्तरीय दक्षता हासिल करने की इच्छुक है। इन भिन्नताओं के बावजूद, मुझे विश्वास है कि कमिन्स की अंतर्दृष्टियां हमें आगे का कोई रास्ता सुझा सकती हैं।

सबसे पहले, कमिन्स भाषाई दक्षता के दो प्रकारोंः बीआईसीएस तथा सीएएलपी के बीच अंतर करते हैं। बीआईसीएस (बेसिक इंटरपर्सनल कमुनिकेशन स्किल्स) यानी आधारभूत अन्तर्व्यैयक्ति संप्रेषण कौशल वे कौशल हैं जो हर दिन होने वाली सामाजिक अन्तर्क्रियाओं के लिए जरूरी होते हैं। दूसरी ओर सीएएलपी, (कॉग्निटिव अकेडेमिक लैंग्वेज प्रोफिसियंसी) संज्ञानात्मक अकादमिक भाषा दक्षता है। यह विशिष्टता उस घटना पर प्रकाश डालती है जिसने भारतीय विश्वविद्यालयों में पढ़ाने वाले हममें से कई को उलझन में डाल रखा है। जहां कभी-कभार हमारा पाला ऐसे छात्रो से पड़ता है जो अंग्रेजी बोलते-लिखते तो धड़ल्ले से हैं लेकिन कोई अकादमिक शोधपत्र लिखने या समझने में असमर्थ होते हैं।

कमिन्स की दूसरी अंतदृष्टि हमारे मकसद के लिए बहुत प्रासंगिक है। जिसे वह सीयूपी-कॉमन अंडरलाइंग प्रोफिसियंसी कहते हैं। उनका तर्क है कि जैसे ही बच्चा या बच्ची पहली भाषा सीखती है, वह कुछ बुनियादी अधिभाषाई कौशल (मैटालिंग्विस्टिक स्किल्स) हासिल कर चुकी होती है, जिनका उपयोग आगे भाषा सीखना आसान बनाने में होता है।

उपरोक्त अवधारणाएं (यथा- बीआईसीएस, सीएएलपी, तथा सीयूपी आदि) कमिन्स के द्विभाषी शिक्षा मॉडल का समर्थन करती हैं, जहां दोनों भाषाओं को समान इज्जत दी गई है।

## द्विभाषी मॉडल

जो मॉडल मैं सुझा रही हूं, मूलतः वह 1968 में शिक्षा आयोग द्वारा मूल रूप से प्रस्तावित तथा एनसीएफ-2005 द्वारा पुनः संस्तुत त्रिभाषा फॉर्मूले के बहुत निकट है। अंतर यह है कि लक्ष्य के रूप में ऐसे स्कूलों का विकास करना होगा, जिनमें मातृभाषा/पहली भाषा और अंग्रेजी को कक्षा आठ तक समान महत्व दिया जाय। इसका मतलब यह है कि पहले तीन सालों तक मातृभाषा/पहली भाषा में बच्चों को शिक्षित करने पर जोर दिया जाएगा। हर दिन का बड़ा हिस्सा मातृभाषा में शिक्षण करने पर लगाया जाएगा। इस तीन साल की अवधि के दौरान गीतों, कविताओं, कला गतिविधियों, कहानियों आदि के जरिए मौखिक अंग्रेजी (स्पोकन इंग्लिश) सिखाई जाएगी। यदि संभव हो, तो अंग्रेजी पढ़ने-लिखने की शुरुआत कक्षा तीन से कराई जाएगी। बाद के वर्षों में अंग्रेजी को दिया गया समय बढ़ाया जाएगा और कुछ तय विषयों (संभवतः गणित एवं विज्ञान) को प्राथमिक तौर पर अंग्रेजी में पढ़ाया जाएगा। (यह महाराष्ट्र में किए जा रहे प्रयास, जिसे सेमी-इंग्लिश कहा गया है, जैसा ही है।) आदर्श के तौर पर कुछ विषय (जैसे- साहित्य अथवा सामाजिक अध्ययन) थीम आधारित हो सकते हैं तथा विशुद्ध द्विभाषी रीति से पढ़ाए जा सकते हैं।

## मॉडल का क्रियान्वयनः समस्याएं एवं संभावना

निश्चय ही, एक आदर्श परिदृश्य का वर्णन करते हुए एक अनुच्छेद लिखना आसान है लेकिन इसे लागू करना पूरी तरह एक अलग महत्व का कार्य है। इसके लिए जबरदस्त राजनीतिक इच्छा, समर्पित नेतृत्व, दूरदर्शी शिक्षणशास्त्र, भारी वित्तीय निवेश तथा विशाल मानव संसाधनों के विकास की आवश्यकता होगी।

### *राजनीतिक इच्छा*

अंग्रेजी माध्यम का नारा तत्काल एक प्रतिक्रिया पैदा करता है। एक द्विभाषी माध्यम स्कूल ठीक वैसा ही रोमांचक नहीं प्रतीत होता। इस मॉडल को उन समुदायों के बीच एक जागरूकता पैदा करने की जरूरत पड़ेगी, जिनके बच्चे सरकारी स्कूलों में जाते हैं। इन दिनों विद्यालय सत्र की शुरुआत 'बड़ी बाता' ('स्कूल चलो') अभियान से होती है जिसमें अभिभावकों को अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों में दाखिला दिलाने का प्रचार किया जाता है। शिक्षक सचमुच गली-गली घूमते हैं और नारे लगाते हैं। द्विभाषी माध्यम स्कूल की धारणा के पक्ष में समर्थन हासिल करने के लिए एक शांत दीर्घकालिक तरीके की आवश्यकता पड़ेगी। सिर्फ शिक्षकों को ही नहीं बल्कि राजनीतिक नेताओं को भी

ऐसे स्कूल, जो मातृभाषा और अंग्रेजी दोनों के साथ न्याय करते हैं, की जरूरत के बारे में अभिभावकों से संवाद करने के रचनात्मक तरीके खोजने होंगे।

ऐसा करते हुए, हमें मातृभाषा को बचाने की जिम्मेदारी गरीबों की है जैसा रुख अपनाने से बचना होगा। कभी-कभी यह कहा जाता है और गरीब उचित ही जवाब देते हैं कि जब अमीर लोग अपने बच्चों को अभिजात अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में भेज रहे हैं, तो मातृभाषा को बचाने का भार हम ही क्यों उठाएं? तर्क यह दिया जाना चाहिए कि बेहतर द्विभाषी शिक्षा से बच्चों को अधिक लाभ होता है।

### *बच्चों में अंग्रेजी से संपर्क का अभाव*

कमिन्स का मॉडल मान कर चलता है कि एक ऐसे समुदाय में जहां बहुसंख्यक आबादी अपनी पहली भाषा की तरह अंग्रेजी बोलती हो, अंग्रेजी सीखने वाले बच्चे बेहद कम संख्या में अल्पसंख्यक होंगे। भारत के शहरों के सरकारी स्कूलों में मामला ऐसा नहीं है। शहरों में श्रमिक के तौर पर काम करने आने वाले प्रवासी परिवारों से बच्चे निरंतर आते रहते हैं। परिवार अंग्रेजी नहीं जानता; जो भाषा वे बोलते हैं कई बार जनजातीय अथवा पड़ोसी राज्य की होती है। यद्यपि, ध्यान देने की बात है कि, जो लोग स्थानीय भाषा नहीं जानते, वे जब शहर आते हैं, तो तीन-चार साल में इस भाषा को धारा प्रवाह बोलना सीख लेते हैं। वे इसे ऐसी स्वाभाविकता के साथ अपनाते है जैसे वे इसमें निमग्न हों और इसकी जरूरत उन्हें अपने अस्तित्व के लिए होती है। अंग्रेजी के साथ यह मामला नहीं है, यद्यपि इस बात से चकित नहीं होना चाहिए कि वे अंग्रेजी के कई शब्दों को जानते हैं। एक दिलचस्प संभावना यह है कि ये द्विभाषी अथवा बहुभाषी बच्चे, एक भाषा-भाषी बच्चों की तुलना में तेजी से अंग्रेजी सीख सकते हैं।

### *शिक्षकों में अंग्रेजी के ज्ञान का अभाव*

शुरुआती तौर पर मुझे व मेरे सहकर्मियों का यह लगा था कि जिन स्कूलों को हमने चुना था, उनके बहुत कम शिक्षक कुछ अंग्रेजी जानते थे। धीरे-धीरे हमें पता चल रहा है कि वे हम जितना सोच रहे थे उससे ज्यादा जानते हैं- हो सकता है वे जितना सोचते हों उससे भी ज्यादा। कुछ अंग्रेजी सीखने को लेकर उत्साहित हैं और बच्चों को भाषा सीखने की गतिविधियों में सक्रिय रखने के लिए रचनात्मकता के साथ रास्ते ढूंढ रहे हैं। उदाहरण के तौर पर, कोई शिक्षक (जो कि तेलुगु और हिन्दी में द्विभाषी है) विभिन्न रंगों के नाम सीखने में बच्चों की मदद करना चाहती है। वह जानबूझकर कई रंगों वाली साड़ी पहनती है और कक्षा उन रंगों की पहचान करते हुए खूब मजा लेती है।

स्वाभाविक है कि ऐसा करने और अंग्रेजी में विज्ञान, गणित अथवा सामाजिक विज्ञान की अवधारणाएं सिखाने के बीच बहुत फासला है। कमिन्स का मॉडल मानकर चलता है कि सभी शिक्षक द्विभाषी होंगे। फिर भी, यह कहीं अधिक यथार्थवादी तरीका हो सकता है कि एक शिक्षक क्षेत्रीय भाषा के लिए हो तथा दूसरा अंग्रेजी के लिए।

किसी भी मामले में, बड़े स्तर पर प्रशिक्षणों का प्रयास करने की आवश्यकता होगी। यद्यपि, हमें बंधे कदम वाले कार्यक्रम से बचना होगा। प्रशिक्षण के तरीके व सामग्री तैयार करने के लिए विभिन्न समूहों को प्रोत्साहित करना महत्वपूर्ण होगा। निःसंदेह, शिक्षकों के विषयवस्तु संबंधी ज्ञान व भाषाज्ञान में सुधार हेतु वीडियो के रूप में इंटरनेट आधारित सामग्री का उपयोग किया जा सकता है। शुरुआती प्राथमिक स्तर पर, स्मार्टफोन के जरिए परस्पर आदान-प्रदान करने वाले व्हाट्सएप समूहों का निर्माण- शिक्षकों के लिए गीत, कहानियां और कविताएं साझा करना आसान बना सकता है।

### *स्कूल पुस्तकालयों की आवश्यकता*

यदि हम अपने स्कूलों में सुधार को लेकर गंभीर हैं तो स्कूल पुस्तकालयों के लिए भारी निवेश की आवश्यकता होगी। जब तक, हम बच्चों की पहुंच पुस्तकों तथा स्कूल की दो या तीन भाषाओं में टीएलएम तक सुनिश्चित नहीं करते, तब तक शैक्षिक सुधार की सभी बातें बेमानी होंगी।

## आखिरी बात

मैंने हमारे सरकारी स्कूलों के लिए एक द्विभाषी मॉडल प्रस्तावित किया है, यह मॉडल कक्षा 8 से 10 तक मातृभाषा/पहली भाषा और अंग्रेजी पर समान जोर देने का प्रयास करता है। इसका मकसद है छात्रों के पास दोनों भाषाओं में बोलने की दक्षता तथा संज्ञानात्मक अकादमिक दक्षता के स्तर पर प्रवीणता होगी।

यह एक मॉडल है। अन्य भी हो सकते हैं। अहम बात यह है कि हम, हमारे सरकारी स्कूलों का इस कदर विकास करने को वचनबद्ध हों कि वे छात्रों को- घरेलू तथा अंग्रेजी- दोनों भाषाओं में बोलने के स्तर पर तथा अकादमिक कुशलता के स्तर पर प्रवीण बना सकें। यदि हम महज स्कूलों का नाम बदलने से ही संतुष्ट हैं तो अभिभावक और बच्चे अंततः महसूस करेंगे कि उनके भरोसे के साथ धोखा हुआ है। और उनके बच्चे अपनी घरेलू भाषा में अथवा अंग्रेजी में अपनी पकड़ बनाने में सक्षम नहीं हैं। यदि ऐसा होता है तो स्कूल अंततः खत्म हो जाएंगे। और इस प्रक्रिया में अनगिनत बच्चों का जीवट टूट जाएगा। एरिक इरिक्सन की उस चेतावनी को दिमाग में रखते हुए हम बेहतर कर सकते हैं, जो इस आलेख की शुरुआत में एक सूक्ति के रूप में दी गई है... ''सभी संभव गुनाहों में सर्वाधिक घातक गुनाह किसी बच्चे के जीवट को कुचल देना है ... ।'' ◆

(यह गीतम विश्वविद्यालय में दिया गया व्याख्यान है, इसे 'शिक्षा विमर्श' को लेखिका की सहमति से 'लैंग्वेज लर्निंग फाउंडेशन' ने उपलब्ध करवाया है। इसे प्रकाशित करने की अनुमति देने के लिए हम गीतम विश्वविद्यालय के आभारी हैं।)

**लेखिका परिचयः** अमेरिका से भारत आकर बसीं सुप्रसिद्ध भाषाविज्ञानी हैं। लगभग 30 वर्षों तक महाराष्ट्र में स्कूली स्तर पर भाषा शिक्षण पर काम करने के बाद वर्तमान में टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज़ (टीआईएसएस) की हैदराबाद शाखा में प्रोफेसर हैं।

**संपर्कः** maxineberntsen@gmail.com